International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 709-713

ऊपरी गंगाघाटी की प्रारम्भिक इतिहास युगीन अधिवास प्रक्रिया और जीवनः कम्पिल के विशेष सन्दर्भ में

डॉ0 देवेन्द्र प्रताप मिश्र
अतिथि प्रवक्ता, प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, सी0 एम0 पी0 डिग्री कालेज, इलाहाबाद, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

मानव सभ्यता के विकास का प्रारम्भिक इतिहास हमें प्रागैतिहासिक काल से ही मध्य सोनघाटी एवं मध्य गंगाघाटी में दिखाई देती हैं। जिसके परिणाम स्वरूप पाषाण उपकरण, लौह तकनीकि का विकास, कृषि परक संस्कृति के विकास आदि रूपों में दिखाई देती है। यदि सम्पूर्ण गंगाघाटी और सोनघाटी का तुलनानात्मक अध्ययन करें तो देखते है कि विकास की प्रक्रिया का बीजारोपड़ सर्व प्रथम मध्य सोनघाटी में प्रारम्भ हुई[1]। इस परिप्रेक्ष में यदि हम ऊपरी गंगा के मैदान के अन्य क्षेत्रों में देखे तो विकास का ये क्रम काफी पीछे चला जाता है किन्तु अधुनातन नवीनतम अनुसंधानों से जो तथ्य प्रकाश में आये हैं, उससे उपरी गंगाघाटी के उत्तर–पश्चिम में सैन्धव सभ्यता के रूप में एक विकसित संभ्यता के प्रमाण दिखाई देते है[2]। यूं कहे कि सभ्यता का बीजारोपण तो मध्य सोनघाटी[3], विन्ध्यक्षेत्र एवं मध्य गंगाघाटी[4] में हुई किन्तु उसके अंकुर सैन्धव सभ्यता में दिखाई देते है जिसकी विकसित डालियाँ क्रमशः ऊपरी गंगा के मैदान तक अपनी प्रतिछाया विखेरी। यही नहीं सम्पूर्ण भारतीय इतिहास में न केवल प्रागैतिहासिक संस्कृति अपितु आद्यैतिहासिक एवं इतिहास के क्षेत्र में इस भू–भाग ने नये महत्वपूर्ण आयाम जोड़े, चाहे वह लोहे की प्राचीनता से सम्बन्धित नवीन तथ्य हों अथवा प्रथम कृषि प्रयोक्ता संस्कृति से सम्बन्धित प्रमाण हो, सभी क्षेत्रों में प्राप्त नवीनतम साक्ष्यों के सन्दर्भ में पुनः गहन विचार की आवश्यकता है, क्योंकि जहाँ पर पहले मध्य गंगा के क्षेत्र में मध्य पाषाण कालीन संस्कृति के स्थल प्रकाश में आये थे किन्तु नवपाषाण कालीन संस्कृति के स्थलों का न मिलना अनेक सवालों को जन्म देता था, लेकिन अब इन अनुत्तरित प्रश्नों का हल झूंसी, लहुरादेवा, मलहर, राजानल का टीला आदि स्थलों के उत्खनन से सहजमेव मिल गया है। इसी कम में ऊपरी गंगा घाटी स्थित कम्पिल, नैमिषारण एवं अहिछत्रा का भी अपना एक विशेष महत्व है।

कम्पिल (20^0 37′ 12′′ उत्तरी अक्षांश– 79^0 16′ 48′′ पूर्वी देशान्तर) पुरास्थल उत्तर प्रदेश के फर्रूखाबाद जिले के कायमगंज तहसील से 10 किमी0 की दूरी पर गंगा नदी के प्राचीन अपवाह क्षेत्र (जिसे अब बूढ़ी गंगा के नाम से जाना जाता है) के किनारे स्थित है। यह पुरास्थल लखनऊ से 240 किमी0 तथा कानपुर से 170 किमी0 की दूरी पर स्थित है। इस प्राचीन नगरी की पहचान महाभारत काल के राजा द्रुपद के राज्य की राजधानी के रूप में की जाती है तथा इसकी दूसरी पहचान दक्षिणी पांचाल की भी राजधानी के रूप में भी होती थी[5]। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार यहाँ पर राजा कैवेय और दुरमुख ने अश्वमेध यज्ञ किया था। श्रृग्वेद के अनुसार प्राक् महाभारत काल में राजा सुदाष की चर्चा मिलती है जो दसराज्ञ युद्ध में भाग लिए थे, इनका साम्राज्य पूर्व में साकेत से लेकर पश्चिमी पंजाब तक फैला था। जिन्होंने हस्तिनापुर में कुरू के पिता सम्परन को भी हराया था। इस नगर साम्राज्य का विस्तृत वर्णन महाभारत, गरूण पुराण एवं भागवत पुराण जैसे ग्रन्थ में मिलता है। ऐसा उल्लेख मिलता है कि महाभारत युद्ध से पूर्व संपूर्ण पांचाल महाजनपद पर राजा द्रुपद का आधिपत्य था जिनकी पत्नी भगवती अथवा प्रणरचा एवं पुत्री द्रौपदी और पुत्र ध्रष्टधुम्न थे। द्रोपदी तथा धृष्टदुम की जन्म स्थली की पहचान के रूप में आज भी जीर्ण–शीर्ण अवस्था में द्रौपदी कुण्ड विद्यमान है जहां द्रोपदी का जन्म हुआ था(छायाचित्र संख्या–1)। यही वह स्थान है जहाँ पर द्रौपदी का स्वयंम्बर भी अर्जुन के साथ हुआ था। महाभारत ग्रन्थ के अनुसार ध्रष्टदुम और द्रौपदी ने महाभारत युद्ध में महत्वपूर्ण भूमि निभाई थी, द्रौपदी द्वारा स्थापित शिवलिंग महाकालेश्वर मन्दिर में आज भी विद्यमान है। लोक कथा के अनुसार यहाँ पर राजभवन से लेकर गंगा नदी तक कलापूर्ण सुरंग बनायी गयी थी जिसमें अस्सी बड़े द्वार तथा चौसठ छोटे द्वार थे। जिसकी यांत्रिक संरचना के बारे में ऐसा कहा जाता है कि इसमें कील ठोंकते ही सभी द्वार स्वतः बन्द हो जाते थे। गंगा नदी पांचाल राज्य को दो भागों में विभाजित करती थीं उत्तरी पांचाल एवं दक्षिणी पांचाल। उत्तरी पांचाल पर द्रोणाचार्य का व दक्षिण पांचाल पर द्रुपद का शासन रहा। जिसकी राजधानी क्रमशः अहिछत्र और कम्पिल में स्थापित हुई। तात्कालीन दक्षिणी कम्पिल की सीमा गंगा से लेकर चंबल नदी तक विस्तृत थी। पांचाल की दोनों राजधानियों में कम्पिल अधिक प्राचीन है। यह स्थल वृहतसंहिता के रचयिता वराहमिहिर की जन्म स्थली तथा महान तपस्वी एवं सांख्य दर्शन के प्रवर्तक कपिल मुनि के कारण भी पवित्र माना जाता है। ऐसा माना जाता है कि कपिल मुनि ने सर्वप्रथम सांख्य दर्शन की शिक्षा अपनी माता को इसी स्थल पर दी थी। यहाँ आज भी कपिल मुनि का आश्रम विद्यमान है(छायाचित्र संख्या–1)। काम्पिल्यपुरी सिद्ध भूमि है ऐसी जानकारी पाकर रघु वंशी राजा राम के छोटे भ्राता शत्रुधन ने भगवान श्रीराम द्वारा लाये गए शिवलिंग की स्थापना यहीं पर की थी, जो आज रामेश्वरम् मन्दिर के नाम से जाना जाता है[6]।

आकृति 1

जैन धर्म में भी कम्पिल का महत्वपूर्ण स्थान है। तेरहवें जैन तीर्थंकर विमलनाथ की जन्मस्थली होने के कारण भी यह स्थल अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। जैन धर्म के चौबीसवें और अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर जी के पदार्पण यहाँ पर हुए थे और यहाँ पर भगवान महावीर जी ने समोशरण (सभापण्डाल) की रचना का थी। तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ के भी धर्म विहार में कम्पिल नगरी सम्मिलित थी। यहाँ पर जैन धर्म की दो शाखाओं श्वेताम्बर और दिगम्बर के जैन मन्दिर आज भी इसके साक्षी है।

कम्पिल या काम्पिल्यपुरी भारत के अति प्राचीन वन्दनीय और दर्शनीय स्थलों में से एक है। वेदों में इसको काम्पिल्य नाम से कहा गया है। इसके अतिरिक्त जैन धर्म के ग्रन्थों में इसका वृहद् विविरण मिलता हैं। कम्पिल के नामकरण के विषय में अनेक मत मिलते है। लोकोक्ति के अनुसार पांचाल्य प्रदेश के राजा भृम्यष्य के सुपुत्र का नाम 'काम्पिल्य' मिलता था संभवतः इसी से इस स्थल का नामकरण हुआ। यहाँ के अन्य दर्शनीय स्थालों में मुख्य रूप से जैन धर्म के श्वेताम्बर और दिगम्बर सम्प्रदाय के मन्दिर, कम्पिल वासिनी मन्दिर और आदिवाराह के मन्दिर विद्यमान है।

वर्तमान गंगा नदी की धारा अपने मूल स्थान से 10 किमी0 की दूरी पर उत्तर दिशा की ओर खिसक चुकि है, जिसके दाहिने किनारे पर काम्पिल नगरी एक छोटे से कस्बे के रूप में अपनी पहचान बनाए हुए है। अब यह नगरी पूर्णतया आबाद है तथा कई व्यापारिक प्रतिष्ठान भी यहाँ स्थापित हो चुके हैं इस क्षेत्र की प्रमुख फसल तम्बाकु एवं आलू आज भी प्रदेश में अपना विशिष्ट स्थान बनाये हुये है। यहाँ से गंगा की मूल धारा अब लगभग सूख चुकी है जिसमें मात्र बरसात के दिनों में ही इसमें पानी दिखता है तभी यह अपने पूर्ण स्वरूप में दिखाई देती है।

मार्च 1878 ई0 में सर अलेक्जेण्डर कनिंघम ने इस स्थल का सर्वेक्षण की तत्पश्चात् प्रो0 बी0 बी0 लाल के द्वारा इस पुरास्थल पर चित्रित धूसर मृद्भाण्ड तथा उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्रों के होने की सूचना प्रकाशित की गई। इस टीले का पुनः सर्वेक्षण 1965–66 ई0 डॉ0 वी0 एन0 मिश्रा द्वारा किया गया, उस समय यह स्थल द्रौपदीगृह के नाम से जाना जाता था। उन्होंने भी यहाँ पर चित्रित धूसर मृद्भाण्ड तथा उससे सम्बन्धित भारी मात्रा में मृद्भाण्डों के होने की सूचना प्रकाशित की। यहाँ पर उत्तरी कृष्ण मार्जित मृद्भाण्ड परम्परा और मुगलकालीन ग्लेज्ड वेयर भी थोड़ी मात्रा में मिलते हैं। इस स्थल का सर्वेक्षण वेनिश विश्वविद्यालय के द्वारा कम्पिल मिशन के तहत यहाँ पर पहला पुरातात्विक सर्वेक्षण किया गया। यह सर्वेक्षण ब्रूनो, मार्को लोगो और जेयांग जे फिलीपी के दिशा निर्देशन में किया गया। इस मिशन में इनके द्वारा द्रुपद किले का सर्वेक्षण किया गया तथा ले–आउट किया गया तदुपरान्त काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के डॉ0 के0 के0 सिन्हा के द्वारा वर्ष 1975–76 ई0 यहाँ पर उत्खनन कार्य सम्पन्न किया गया। इन्होंने यहाँ पर टीले के भिन्न–भिन्न भागों में एक–एक वर्ग मीटर में 6 निखात लगाई फलस्वरूप कुछ सेक्सन की भी स्क्रैपिंग कराई गई। जिसके फलस्वरूप चित्रित धूसर मृद्भाण्ड का 2.40 मीटर का मोटा जमाव प्राप्त हुआ। साथ ही अन्य मृद्भाण्डों में ग्रे वेयर, ब्लैक स्लिप्ड वेयर, एवं ब्लैक एण्ड रेड वेयर प्राप्त हुआ। इस बात का उल्लेख इटली के पुरातत्वविद् अन्ना मारिया, डोला पाटी एवं लोचोमार काटो ने अपनी पुस्तक 'आर्कियोलाजीकल स्टडी ऑफ एसाइट इन द किंग्डम ऑफ पांचाल' में किया था[7]। किन्तु ये उत्खनन कार्य अत्यन्त सीमित रहा जिससे तत्कालिन पुराविदों द्वारा किसी निष्कर्ष पर सहमति नही बन पाई।

ब्रूनों और फ्लिपी के द्वारा भी द्रुपद किले का ले–आउट सम्पन्न कराया गया जिसके टीले के गर्त छिपे हुए कई राज स्पष्ट हुए प्रथम यह है कि इस तरह का नगर विन्यास जो कि हाल ही में हुए गुजरात में धौलावीरा के उत्खनन के समान विशेषता रखता है। परन्तु धौलावीरा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह हड़प्पा कालीन स्थल था जिसकी प्राचीनता कम्पिल से 2000 वर्ष पूर्व ले जाया गया है। इससे यह विदित होता है कि हड़प्पा सभ्यता से लेकर गंगाघाटी में छठी शताब्दी ई0 पू0 तक समान नगरीय प्रणाली का प्रयोग किया जा रहा था[8]।

कम्पिल टीले का उत्खनन लखनऊ विश्वविद्यालय प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के पूर्व विभागाध्यक्ष प्रोफेसर डी0 पी0 तिवारी के निर्देशन में वर्ष 2010–11 एवं 2011–12 में किया गया[9], जिसमे लेखक भी सहायक सुपरवाइजर के रूप में कार्य किया। कम्पिल टीले के भिन्न–भिन्न भागों पर उत्खनन के निमित्त कुल 9 निखातें लगाई गयी। सभी निखातों का उत्खनन प्रारम्भ (ह्यूमस के बाद) से लेकर प्राकृतिक जमाव तक उत्खनन कार्य किया गया। उत्खनन से प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर इस पुरास्थल की संस्कृति को कुल पाँच भागो में क्रमशः प्राक् चित्रित धूसर पात्र परम्परा संस्कृति, चित्रित धूसर पात्र परम्परा संस्कृति, उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा संस्कृति, कुषाण और गुप्त कालीन संस्कृति, और मध्यकालीन, संस्कृतियों विभाजित किया गया है[10]।

1. प्राक् चित्रित धूसर पात्र परम्परा संस्कृति
2. चित्रित धूसर पात्र परम्परा संस्कृति
3. उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा संस्कृति
4. कुषाण और गुप्त कालीन संस्कृति
5. मध्यकालीन संस्कृति

1. **प्राक् चित्रित धूसर पात्र परम्परा संस्कृति :–** उत्खनन के दौरान इस स्तर से चित्रित काले मृद्भाण्ड, चिकने काले चमकीले मृद्भाण्ड, काले और लाल रंग के मृद्भाण्डों के ठीकरे प्राप्त हुए हैं। चित्रित काले रंग के पात्रों के आकारों में मध्यम गढ़न के कटोरे, गर्दन के बाहरी और नीचे के भाग पर खड़ी रेखाओं के अभिप्राय बने हैं। चिकने काले चमकीले पात्रों प्रकारों में मध्यम गढ़न के कटोरे और थालियों के आकार के ठीकरे प्राप्त हुए है। लाल और काले रंग के पात्रों में मध्यम गढ़न के कटोरे, लाल चमकीले पात्रों के आकारों में मध्यम गढ़न के मोटे कटोरे,

थालियाँ, नाद, नली युक्त नाद, घड़े, छोटे घड़ों के ठीकरों की प्राप्ति हुई है। लाल रंग के पात्र प्रकारों में घड़े, जार और संग्रहण पात्र, मध्यम गढ़न के मोटे पात्र, रस्सी की छाप जार पर भी प्राप्त हुए है। इसके अतिरिक्त पुरावशेषों में हड्डी के बाणाग्र, पकी मिट्टी के मनके, पत्थर के औजार और मिट्टी के बर्तनों के हॉप–स्कॉच और हड्डी के टुकड़ों की भी प्राप्ति हुई है।

2. **चित्रित धूसर पात्र परम्परा संस्कृति :–** इस स्तर से चित्रित धूसर पात्र–प्रकारों में जो ठीकरों की प्राप्ति हुई है उनमें मध्यम पतले गढ़न के पात्र–प्रकारों में कटोरे और थाली। पात्रों की बारी पर चित्रित पट्टियाँ बनाई गई हैं। क्षैतिज रेखाएँ, शैर्षिक रेखाएँ, घुँघराले रेखाएँ, टेढ़ी–मेढ़ी रेखाएँ, और वनस्पतियों की डिजाइने काले रंग से बनी हैं। सहयोगी पात्रों में धूसर पात्र, पतले मध्यम गढ़न के आकर में कटोरे और थाली, ऑरेन्ज और लाल चमकीले पात्र मध्यम गढ़न के पात्र में कटोरे, थाली, नाद, नलीयुक्त नाद, और जार, लाल पात्र में पतले स्थूल गढ़न के पात्र में कटोरा, थाली, नाद, घड़े, नली और आकार विहीन कुछ काले और लाल पात्र और हड्डियाँ थोड़ी संख्या में प्राप्त हुई हैं। मिट्टी के तष्तरियाँ हाप–स्कॉच, संगमरमर, स्टॉपर/गेम्समैन और मिट्टी के मनके, पत्थर (स्फटिक, कार्नेलिनयन, अगेट) के मनके और हड्डी के बाणाग्र आदि इस काल खण्ड से प्राप्त हुए हैं(छायाचित्र संख्या–2)।

आकृति 2

3. **उत्तरी कृष्णमार्जित पात्र परम्परा संस्कृति :–** इस काल के पात्र मध्यम स्थूल गढ़न के आकार में कटोरे, घड़े, जार, हांडी, छोटे घड़े, और नाद। लाल चमकीले पात्रों में मध्यम गति पर बने स्थूल गढ़न वाले आकार में कटोर, थाली, छोटे घड़े, बड़े घड़े, जार और हांडी, धूसर पात्र–प्रकारों में मध्यम गति पर पतले गढ़न के आकार वाले पात्रों में कटोरे, और थालियाँ, उत्तरी कृष्णमार्जित मृद्भाण्ड पात्रों में तीव्र गति के चाक पर बने पतले गढ़न वाले पात्रों में कटोरा, ऑरेन्ज–रेड स्लिप पात्रों में पतले गढ़न के आकार वाले पात्रों में कटोरे और रस्सी के छाप वाले लाल पात्र और हड्डियाँ आदि की प्राप्ति हुई हैं। मिट्टी की तश्तरी, घट के आकार में मनके, संगमरमर, स्टॉपर/गेम्समैन, हॉप्सकॉच और हड्डी के बाणाग्र आदि भी इस काल के उत्खनन से प्राप्त हुए हैं(छायाचित्र संख्या–3)।

आकृति 3

4. **कुषाण और गुप्त कालीन संस्कृति** :– इस स्तर के जमाव में कुषाण और गुप्त काल के स्तरों के मध्य मध्यकालीन के लोगों के क्रिया–कलापों के द्वारा भारी क्षति हुई है। जिससे इस काल खण्ड के पुरावशेष काफी क्षतिग्रस्त हो गये है। लेकिन कुछ पुरावस्तुओं विषेशकर मृण्मय वस्तुएँ, एवं विखण्डित ईंटों के टुकड़े इस काल–खण्ड की विशिष्टता

है जिसके आधार पर इस स्तर सही पहचान की जा सकती है। कुषाण कालीन ध्वंशावशेष पर गुप्त कालीन आवासीय जमाव है जिसमें कुषाण कालीन ईंटों का ही पुर्नउपयोग किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि भवन संरचना का कार्य बार–बार एक ही स्तर पर कई बार किया गया हो। उत्खनन में प्राप्त साक्ष्यों से इस परिकल्पना की उपज को सहारा मिलता है।

5. **प्राक् मध्यकालीन/मध्यकालीन संस्कृति** :– इस काल के पात्रों में लाल रंग के पात्रों प्राप्त होते है। ठीकरों से प्राप्त पात्र–प्रकारों में कटोरे, पेंदीदार कटोरे, घुण्डीदार ढक्कन वाले गुलमी, शंकु ढक्कन वाले गुलमी, खूँटी वाले गुलमी, घड़े, सुराही, जार, हांडी, नौतल हांडी, नलीदार जार, नाद मध्यम गढ़न के स्थूल पात्र; लाल चमकीले पात्रों में छिछली थालियाँ कटोरे, घड़े, हांडी और चिलम मध्यम गढ़न के स्थलू बनावट पात्र, काले पात्र–प्रकारों में छिछली थालीयाँ, धूसर पात्रों में कटोरे मध्यम गति के स्थूल बनावट के और ग्लेज़्ड वेयर में कटोरे और थाली, ईटों के टुकड़े और हड्डियाँ, मृण्मय मानवाकृति, जानवरों के क्षतिग्रस्त भाग, क्षतिग्रस्त मानव आकृतियाँ, क्षतिग्रस्त स्त्री की आकृतियाँ, संगमरमर, पत्थर (कार्नेलियन और अगेट) के मनके, लोहे के औजारों में कील, चाकू, पिन, आदि तांबे की पिन, सिक्के, हड्डियों के बाणाग्र, आदि इस काल से प्राप्त हुए हैं।

XX3, Qdt III

एक ट्रेन्च टीले के पश्चिमी ढलान पर दौखली शाह के मजार के निकट लगाई गई जिसे xx3 एवं xx4 नाम दिया गया। इस ट्रेन्च में 3.20 मीटर तक उत्खनन में इसमें कुछ जामव 2. 30 मीटर पर प्राप्त हुआ, जिसे चार स्तरों में विभाजित किया प्रथम स्तर में लगभग तीन मीटर चौड़ी सड़क प्राप्त हुए परन्तु उत्खनन का दायरा सीमित होने के कारण इसकी लम्बाई का ठीक–ठीक अनुमान नहीं लगाया जा सका, कुछ पुरातत्वविद् इसे फर्श की संज्ञा दी है। दूसरे स्तर से पिट प्राप्त हुआ जिसमें गिरे हुए मलवे का काफी बड़ा जमाव प्राप्त हुआ। इसमें से पहली लेयर 55 सेमी मोटी प्राप्त हुई और इसमें से जो ठीकरे प्राप्त हुए उनमें लाल पात्रों में घड़े, जार, छोटे कटोरे; लाल रंग के चमकीले पात्रों में कटोरे और थालियाँ जो मध्यम गति के स्थूल गढ़न की हैं। धूसर पात्रों के आकारों में कटोरे और थालिया, काले चमकीले पात्रों में कटोरे और थालियाँ, ऑरेन्ज रेड स्लिप्ड वेयर में थाली के आकार के ठीकरे प्राप्त हुए है। उत्तरी कृष्ण मार्जित मृद्भाण्ड में थाली और ग्लेज़्ड वेयर में आकार विहीन पात्रों की पात्रों की प्राप्ति हुई है। और हड्डियों की भी प्राप्ति हुई है। लगभग 3 मीटर की गहराई पर चटाई छाप युक्त सतह प्राप्त हुई जो प्रोफेसर तिवारी के अनुसार बर्नस्पेच बताया गया है। कुछ पुराविद् इसे जुते हुये खेत की संज्ञा देते है।

इस प्रकार कम्पिल पुरास्थल पर प्रागैतिहास काल से लेकर मध्य काल तक के क्रमशः प्राक् चित्रित धूसर पात्र परम्परा संस्कृति, चित्रित धूसर पात्र परम्परा संस्कृति, उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा संस्कृति, कुषाण और गुप्त कालीन संस्कृति, और मध्यकालीन, संस्कृति के अधिवासी जमाव प्राप्त होते है। यहाँ की संस्कृति का समग्र अध्ययन करने के लिये अभी बृहद् पैमाने पर उत्खनन कार्य की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. Gazeteer Madhya Pradesh : Governemnt of Madhya Pradesh, pp.1.
2. Historical Geography of Madhya Pradesh : Bhattacharya, P.P. 45-49.
3. Palaeolithic Maiher, Satna Distt., Madhya Pradesh A. Preliminary Report of Excavations : Pal, J.N., Pandey, J.N., 2-3.
4. Ahmad, N. 1966. Stone age Cultures of the upper son valley.
5. काम्पिल्य महात्म्य पृष्ठ संख्या–5.
6. पद्मपुराणांतर्गत, पुरुषोत्तममास माहात्म्य, टीकाकार विद्यावारिधि पं0 ज्वाला प्रसाद मिश्र, खेमराज, श्री कृष्णदास प्रकाशन बम्बई पृष्ठ संख्या–113.
7. दैनिक समाचार–पत्र ''दैनिक जागरण'' फर्रुखाबाद संस्करण, दिनाकं– 18/03/2012, पृष्ठ संख्या–9.
8. उपरोक्त.
9. Souvernir- International Conference of 16th congress of Rock Art Societ of India on the theme Beginning of cattle domestication: Perspectives of rock art and Archaeology.
10. उपरोक्त.